दुनिया को एक जीवंत वामपंथ की ज़रूरत है : चौबीसवाँ न्यूज़लेटर (2026)

अफ़्रीकी गुएर्निका, डुमाइल फेनी (दक्षिण अफ़्रीका), 1967.

प्यारे दोस्तो,

ट्राईकॉन्टिनेंटल : सामाजिक शोध संस्थान की ओर से अभिवादन।

29 से 31 मई तक दक्षिण अफ़्रीका की वामपंथी ताक़तें जोहान्सबर्ग में वामपंथ के सम्मेलन में इकट्ठा हुईं। इस सम्मेलन की पृष्ठभूमि के बारे में जानना बहुत ज़रूरी है। दक्षिण अफ़्रीका में औचारिक रूप से नस्लभेद के ख़ात्मे के तीस साल से ज़्यादा गुज़र चुके हैं लेकिन वहाँ के लोग अब भी मूलभूत आवश्यकताओं के लिए संघर्ष कर रहे हैं। **बेरोज़गारी** दर आधिकारिक तौर पर 32.7% है, लेकिन जब उन लोगों की भी गणना की जाए जिनमें काम करने की क्षमता है पर उन्होंने निराश होकर काम की तलाश बंद कर दी है, तो यह आँकड़ा 43.7% पहुँच जाता है। इस बीच बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ देश की संपदा को लूट रही हैं। संपदा के उत्पादन और वितरण के बीच इस असंतुलन को सुलझा न पाने की वजह से अफ़्रीकी राष्ट्रीय कांग्रेस (एएनसी) बिखर गई। यह एक दौर में राष्ट्रीय मुक्ति के संघर्ष का इंजन हुआ करती थी जो अब अमीरों की पार्टी बनकर रह गई है। इसी के साथ, वामपंथी ताक़तें निराशा से जूझ रही हैं जबकि दक्षिणपंथ बेलगाम घूम रहा है, इनमें पुराना नस्लभेदी दौर का कुलीनतंत्र भी शामिल है।

ऐसी समय में दक्षिण अफ़्रीकी कम्युनिस्ट पार्टी (एसएसीपी) और इस सम्मेलन की संचालन समिति कई तरह की राजनीतिक शक्तियों को एक साथ लाई हैं ताकि वे दक्षिण अफ़्रीका और इन्हीं हालात से जूझ रहे अन्य देशों के लिए रणनीति से जुड़े अहम सवालों पर बहस कर सकें। सम्मेलन में इकट्ठा हुई कई राजनीतिक ताक़तें एएनसी से टूटकर अलग हुई हैं।

सम्मेलन में मौजूदा समय और हालात पर एक पूरा सत्र हुआ जिसमें मुझे हमारे संस्थान की ओर से बात रखने का मौक़ा मिला। आगे पेश किए जा रहे विचार इसी वक्तव्य के आधार पर दिए जा रहे हैं।

सेंट जॉर्ज और ड्रेगन, लूई मखुबेला (दक्षिण अफ़्रीका), 1956.

हम तभी जीतेंगे जब लड़ेंगे। अगर हम हार से डरते रहे तो कुछ नहीं कर सकते।

30 मई को सेंटर ऑफ़ इंडियन ट्रेड यूनियन्स (सीटू) ने अपना छप्पनवाँ स्थापना दिवस मनाया। यह मज़दूर संगठन सत्तर लाख से ज़्यादा मज़दूरों का प्रतिनिधित्व करता है। 12 फ़रवरी 2026 को सीटू ने अन्य केंद्रीय मज़दूर संगठनों और किसान संगठनों के साथ मिलकर नई श्रम संहिताओं के ख़िलाफ़ **आम हड़ताल** की। इन संहिताओं से मज़दूरों के अधिकार कमज़ोर होंगे – सामूहिक सौदेबाज़ी (कलेक्टिव बार्गेनिंग) ख़त्म हो जाएगी, ठेकेदारी प्रथा को बढ़ावा मिलेगा और काम के घंटे बढ़ाए जाने का रास्ता साफ़ होगा। अनुमान है कि इस हड़ताल और इसके दौरान देश भर में हुए विभिन्न प्रदर्शनों में तीन करोड़ मज़दूरों, किसानों और श्रमिक वर्ग के अन्य लोगों ने हिस्सा लिया। भारत के मज़दूर बेहद मुश्किल हालात में भी अपने संघर्ष को जारी रखे हुए हैं। वे 2020-2021 के उस **किसान आंदोलन** की ही तरह विपरीत परिस्थितियों में भी खड़े हैं जिसने देश भर के लाखों मज़दूरों का समर्थन प्राप्त किया था और सरकार को किसान-विरोधी क़ानून वापस लेने पर मजबूर किया था।

हम तभी जीतेंगे, जब लड़ेंगे और अगर हम तुरंत ही अपने लक्ष्य हासिल न भी कर पाएँ तब भी हम खाली हाथ नहीं रहते। हमें मिलता है हौंसला और अनुभव अपनी अगली लड़ाई के लिए।

हम संगठित मज़दूर-वर्ग, किसानों और राष्ट्रीय मुक्ति के संघर्षों के एक सदी से भी लंबे इतिहास पर खड़े हैं। इन संघर्षों ने अभिव्यक्ति पाई **पेरिस कम्यून** (1871), अक्टूबर क्रांति (1917), वियतनाम क्रांति (1945), चीनी क्रांति (1949), क्यूबा क्रांति (1959) और असंख्य उपनिवेशवाद-विरोधी सफलताओं में, जिनमें **साहेल** क्षेत्र में हो रही घटनाएँ भी शामिल हैं जो उल्लेखनीय हैं और उनके बारे में अब तक ज्यादा जाना नहीं गया। वामपंथ के बारे में कोई चर्चा ज़रूरी नहीं कि निराशा से शुरू हो। मज़दूर वर्ग और किसानों को इन संघर्षों में और पूँजीवाद से परे एक समाजवादी समाज को आकार देने की प्रक्रिया में अपनी अहम भूमिका पर गर्व होना चाहिए।

बेहद बदसूरत, सैम नलेंगेत्शवा (दक्षिण अफ्रीका), 1992.

2008 के आर्थिक संकट के बाद से विश्व अर्थव्यवस्था में प्रगति की दर धीमी रही, ऋण बढ़ा है, उत्पादक निवेश गिरता जा रहा है और सामाजिक असमानताएँ गहरी होती जा रही हैं। सबसे ज्यादा गिरावट उत्तरी अटलांटिक की अर्थ्व्यवस्थाओं में देखने को मिली है, जो अब भी उस संकट से जूझ रही हैं जिसे हमने **तीसरी महामंदी** का नाम दिया है।

संयुक्त राज्य अमेरिका (यूनाइटेड स्टेट्स/ यूएस) और इसके सहयोगी देश इन आर्थिक समस्याओं को सुलझाने और एक विश्वसनीय सामाजिक कार्यक्रम पेश करने में असफल रहे हैं। वित्त, प्रौद्योगिकी और प्राकृतिक संसाधनों पर जैसे-जैसे इनका नियंत्रण कमज़ोर हुआ है, वैसे-वैसे एक पतनशील और ख़तरनाक अभिजात वर्ग ने सूचना पर अपना नियंत्रण बढ़ाया है और अपने स्थान को बचाए रखने के लिए युद्ध को बढ़ावा दिया। यह **अति-साम्राज्यवाद** का दौर है। इस अति-साम्राज्यवाद के हमले स्पष्ट हैं: चीन, क्यूबा, ईरान, लेबनान, फ़िलिस्तीन, वेनेज़ुएला और यमन, सब इसके निशाने पर हैं। ये घटनाएँ **नए शीत युद्ध** से और तीव्र हो गई हैं, जिसमें यूएस विशेष रूप से चीन के उदय और सामान्य रूप से विकास का केंद्र एशिया बन जाने को रोकने का प्रयास कर रहा है।

इन घटनाओं से स्पष्ट है कि हमारे युग का केंद्रीय विरोधाभास एक ओर अपने वर्चस्व को बनाए रखने का प्रयास करने वाली घटती साम्राज्यवादी व्यवस्था और दूसरी ओर संप्रभुता, विकास और सामाजिक न्याय की तलाश में लोगों और राष्ट्रों की आकांक्षाओं के बीच है।

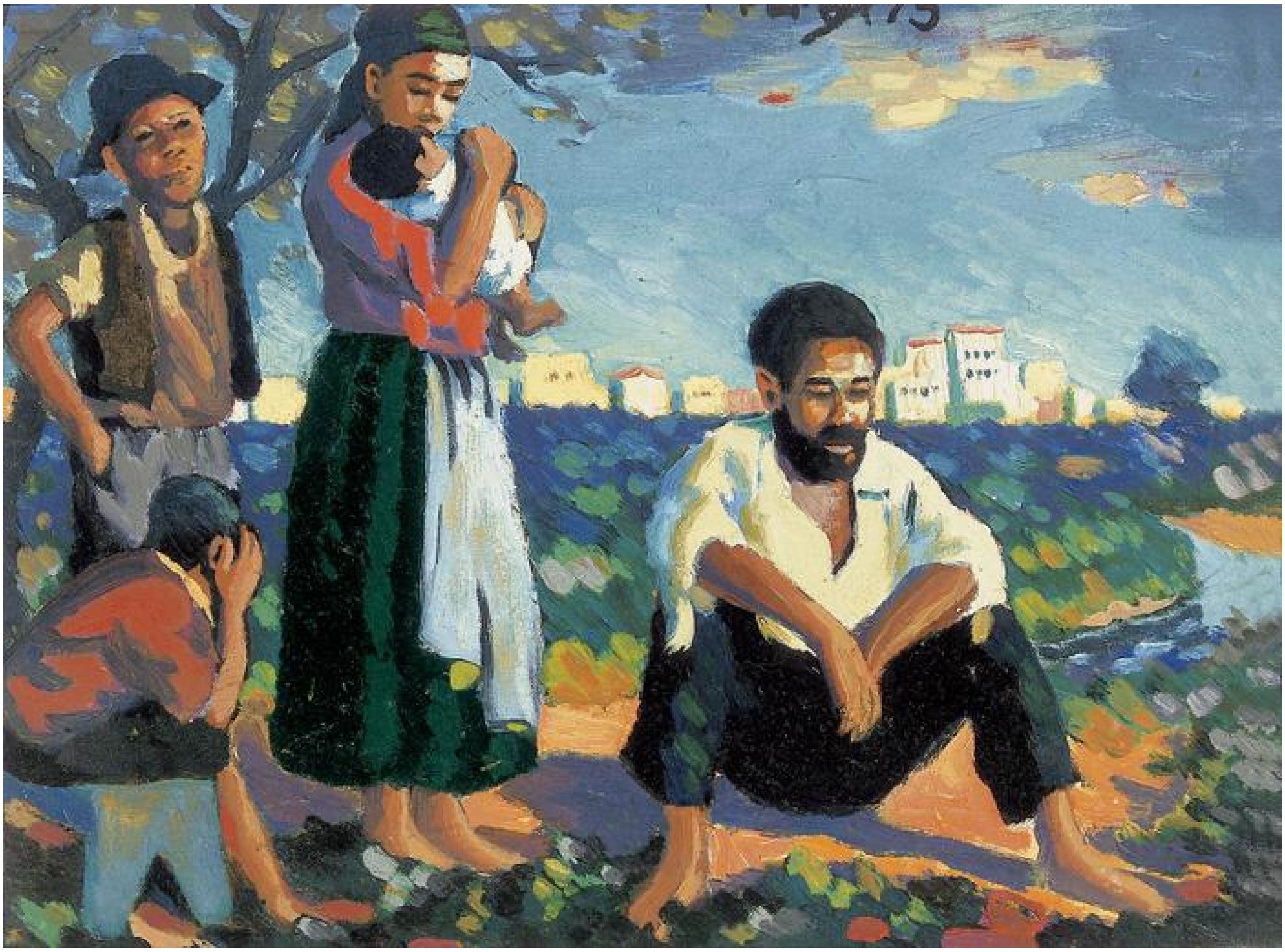

बेघर, जॉर्ज पेंबा (दक्षिण अफ़्रीका), 1973.

हालाँकि, साम्राज्यवादी शक्ति का कमज़ोर होना अपने आप में मुक्ति हो जाना नहीं है। इतिहास कोई स्वचालित बदलाव या जीत प्रदान नहीं करता है। पुरानी व्यवस्था का विखंडन अवसर तो पैदा करता है, लेकिन साथ ही इसके ख़तरे भी हैं: अंतर-पूँजीवादी प्रतिद्वंद्विता, क्षेत्रीय युद्ध, विषैली राजनीतिक विचारधाराएँ और वैश्विक दक्षिण से वैश्विक उत्तर की ओर संपत्ति के दोहन की तीव्रता। यही कारण है कि मानवता के सामने निर्णायक प्रश्न है संगठन। क्या मज़दूर वर्ग और उत्पीड़ित जनता इस संकट में स्वतंत्र रूप से हस्तक्षेप करने के लिए पर्याप्त संगठित शक्ति का निर्माण कर सकते हैं? यह

हमारे युग की केंद्रीय चुनौती है। यहाँ, हमें वामपंथ के संकट के बारे में स्वयं ईमानदारी से बात करनी चाहिए। कई देशों में, बीसवीं सदी के अंत में नवउदारवादी आक्रमण के दौरान कम्युनिस्ट और मज़दूर आंदोलनों को ऐतिहासिक हार का सामना करना पड़ा। मज़दूर संगठन कमज़ोर हुए हैं। राजनीतिक शिक्षा में गिरावट आई। चुनाववाद ने जन संघर्षों का स्थान ले लिया। ग़ैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) ने लोकप्रिय संरचनाओं की जगह ले ली है।

पिछले चालीस वर्षों में, ऐतिहासिक रूप से राष्ट्रीय मुक्ति पार्टियाँ (जैसे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और एएनसी) और सामाजिक लोकतांत्रिक पार्टियाँ अपने मिशनों को समाप्त कर चुकी हैं – वे अब सामाजिक कल्याण की बुनियादी आवश्यकताओं पर दृढ़ नहीं हैं। इन पार्टियों का संसाधनों के न्यायसंगत बँटवारे में कोई विश्वास नहीं रह गया है और उन्होंने **अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष** (आईएमएफ) के समाज कल्याण की योजनाओं में सरकारी ख़र्च में कटौती (ऑस्टेरिटी) के ढाँचे को अपना लिया है। इस वैचारिक क़ब्ज़े (ब्रेन कैप्चर) ने नीति निर्माण के क्षेत्र को तबाह कर दिया है, जिससे सरकारें बांडधारकों सहित धनी लोगों की आवश्यकताओं का समर्थन करते हुए अपने लोगों की तात्कालिक आवश्यकताओं की उपेक्षा कर सकती हैं। सामाजिक लोकतंत्र के पतन का अर्थ यह हुआ है कि वामपंथ को सामाजिक-क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए संघर्ष करने के अपने ऐतिहासिक मिशन का विस्तार करते हुए उसमें जनता की तात्कालिक आवश्यकताओं के लिए संघर्ष को भी शामिल करना पड़ा है। अपने सीमित संसाधनों के बावजूद, यह वामपंथ ही है जो तेज़ी से निराशाजनक स्थितियों में फँसी आबादी के लिए सामाजिक कल्याण, भोजन, पानी और स्वास्थ्य सेवा सुरक्षित करने की लड़ाई में सबसे आगे रहा है।

वाटुस्सी चीफ़ की पत्नी पीले रंग में, इरमा स्टर्न (दक्षिण अफ्रीका), 1946.

भविष्य का निर्धारण अभिजात वर्ग की योजनाओं या संस्थाओं की उदारता से नहीं होगा। शासक वर्ग निगमों, बैंकों, मीडिया प्रणालियों और सैन्य गठबंधनों के माध्यम से वैश्विक स्तर पर संगठित हैं। दुनिया के लोगों को समान गंभीरता के साथ संगठित होना चाहिए। इसके लिए धैर्य, वैचारिक स्पष्टता, और समाजवादी राजनीति में विश्वास की आवश्यकता है, पुरानी यादों (नॉस्टेल्जिया) के रूप में नहीं, बल्कि अनिवार्यता के रूप में। एकता आवश्यक है। एक जीवंत वामपंथ में हमेशा अलग-अलग परंपराएँ और बहसें होंगी, लेकिन हमें श्रम और पूँजी के बीच, सामाजिक संपदा पैदा करने वाले

विशाल बहुमत और उसे हड़पने वाले अल्पमत के बीच मुख्य विरोधाभास को पहचानना होगा। जैसा कि सैकप (एसएसीपी) के महासचिव सोली मापैला ने कहा, 'हम अपने मतभेदों के बावजूद दुश्मन नहीं हैं।' जब वामपंथ खंडित होता है, तो प्रतिक्रियावादी ताक़तें निराशा का फ़ायदा उठाती हैं। लेकिन जब प्रगतिशील आंदोलन राजनीतिक शिक्षा, जन लामबंदी और ठोस संघर्ष के माध्यम से एक साथ कार्य करते हैं, तो श्रमिक अपनी सामूहिक शक्ति को पहचानने लगते हैं।

इसीलिए मेहनतकश वर्ग की ताक़त को फिर से खड़ा करना हमारे सामने सबसे महत्त्वपूर्ण काम है। इसमें केवल चुनावी गठबंधन या अभिजात वर्ग के बीच पर्दे के पीछे की बातचीत ही शामिल नहीं है, बल्कि श्रमिकों, बेरोजगारों, महिलाओं, छात्रों, अनौपचारिक श्रमिकों, किसानों और समुदायों के बीच जमीनी स्तर पर संगठित होना भी शामिल है। वामपंथ को राजनीतिक शिक्षा, लोकतांत्रिक जन संगठन, सामूहिक अनुशासन और अंतर्राष्ट्रीयता की परंपराओं को पुनः प्राप्त करना होगा। अंतरराष्ट्रीयतावाद देशों के बीच की दानशीलता नहीं है, बल्कि यह समझ है कि दुनिया के मेहनतकश वर्ग पूंजी के संचय और साम्राज्यवादी प्रभुत्व की व्यवस्था के रूप में एक साझा दुश्मन का सामना कर रहे हैं।

शहर की सड़क, गेरार्ड सेकोटो (दक्षिण अफ्रीका), 1958.

समाजवाद अब सिर्फ़ एक आकाँक्षा भर नहीं रह गया है। यह इंसानी समाज के बने रहने की अनिवार्य शर्त बन चुका है। लेकिन समाजवाद अचानक नहीं आएगा। इसका निर्माण करना होगा लोकप्रिय शक्तियों के संस्थानों द्वारा और लोगों के दैनिक जीवन से जुड़े संगठित आंदोलनों के ज़रिए। हमारे पास इसके स्पष्ट उदाहरण हैं, वामपंथ द्वारा बनाई गईं केरल की **सहकारी संस्थाएँ**, ब्राज़ील के भूमिहीन श्रमिकों द्वारा बनाई गईं **बसावटें** और एसएसीपी के लाल कारवाँ। ये प्रोजेक्ट फ़िलहाल अपने पूरे स्वरूप में नहीं आए हैं: ये उस **भविष्य** के टुकड़े हैं जो अभी पूरी तरह आया नहीं है लेकिन जिसका

निर्माण जारी है। ये प्रयोग असल मायने में वही हैं जिसे कार्ल मार्क्स ने 'संभावित साम्यवाद' **कहा** था।

इसलिए इस तरह के सम्मेलन ज़रूरी हैं। इनसे हर फ़ौरी रणनीतिक सवाल का हल तो नहीं निकल सकता लेकिन ये दशकों के बिखराव के बाद एक साझी राजनीतिक शक्ति के पुनर्निर्माण की कोशिश का प्रतीक हैं। आगे का रास्ता मुश्किल होगा। लेकिन इतिहास की संभावनाएँ खुली हैं। साम्राज्यवाद ताक़तवार ज़रूर है लेकिन अजेय नहीं। पूँजीवाद हिंसक ज़रूर है लेकिन अनश्वर नहीं। मज़दूर वर्ग और शोषित जनता आज भी इतिहास निर्माता हैं। हमारा काम है इस एतिहासिक शक्ति को सजग और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर क्रांतिकारी धैर्य के साथ संगठित होने में मदद देना।

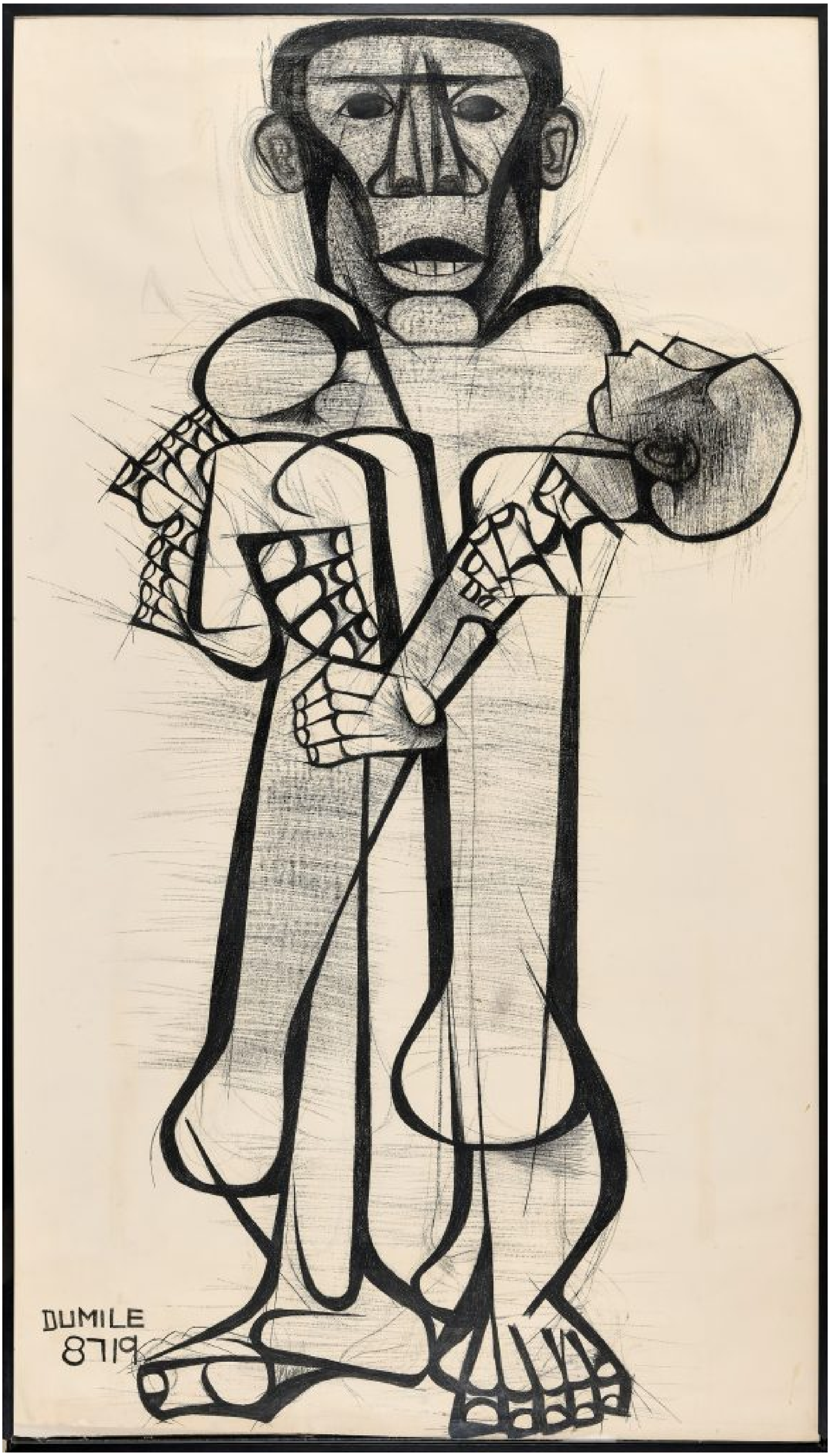
DUMILE
8719

हेक्टर पीटरसन, डुमाइल फेनी (दक्षिण अफ्रीका), 1987.

हमारी बैठक सोवेटो के पास हुई, जहाँ पचास साल पहले, 16 जून 1976 की सुबह, अश्वेत छात्रों ने अपनी भाषाओं में शिक्षा के अधिकार से वंचित किए जाने और अफ्रीकान्स में पढ़ने के लिए मजबूर किए जाने के अपमान के ख़िलाफ़ एक विरोध प्रदर्शन शुरू किया था। हज़ारों युवा छात्र मार्च कर रहे थे, पुलिस ने उन पर गोलियाँ चलाईं, जिसमें कम से कम 176 की मौत हो गई और 1,000 से अधिक घायल हो गए। बारह वर्षीय हेक्टर पीटरसन गोली लगने वाले पहले छात्रों में से एक थे। फोटोग्राफर सैम नज़ीमा ने छात्र मबुयिसा मखुबो को घायल हेक्टर को उठाकर ले जाते हुए अपने कैमरे में कैद किया, जिसमें हेक्टर की बहन एंटोनेट उनके बगल में दौड़ रही थी। अब मशहूर हो चुकी यह तस्वीर ऊपर दिखाए गए डुमाइल फेनी की 1987 की पेंटिंग के लिए प्रेरणा बनी। गोलियों की आवाज़ नहीं रुकी।

> शहर के बीचोंबीच, थोड़ी सी बर्बरता
> उदास सोवेटो
> उदास सोवेटो

दक्षिण अफ्रीकी गायक और नस्लवाद-विरोधी कार्यकर्ता मिरीयम मकेबा ने अपने गीत 'सोवेटो ब्लूज़' में गाए थे, गीतकार ह्यू मैसकेला ने इस हत्याकांड के बाद यह गीत लिखा था। पचास साल बाद सोवेटो को, दक्षिण अफ्रीका के बच्चों को आज भी एक जीवंत वामपंथ की ज़रूरत है – और साथ ही हम सबको भी।

स्नेह सहित,

विजय